मानव धर्म

मुझे खुद को जिस चीज़ से दु:ख हो, वैसा दु:ख मैं किसी को ना दूँ।

दादा भगवान कथित

मानव धर्म

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : **अजीत सी. पटेल**
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन,
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने, नवरंगपुरा,
अहमदाबाद - 380009, Gujarat, India.
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77

प्रथम संस्करण : प्रतियाँ 5,000 दिसम्बर, 2009
रीप्रिन्ट : प्रतियाँ 23,000 जून, 2010 से जूलाई, 2019
नई प्रिन्ट : प्रतियाँ 3,000 अक्तूबर, 2024

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : 20 रुपए

मुद्रक : अंबा मल्टीप्रिन्ट
एच.बी.कापडिया न्यू हाइस्कूल के सामने,
छत्राल-प्रतापपुरा रोड, छत्राल,
ता. कलोल, जि. गांधीनगर-382729, गुजरात
फोन : +91 79 3500 2142

ISBN/eISBN : 978-93-86289-59-9

Printed in India

त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो उवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥

ॐ नमः शिवाय ॥ ३ ॥

जय सच्चिदानंद

'दादा भगवान' कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन पर बैठे श्री ए.एम.पटेल रूपी देहमंदिर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य को भी प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे 'अक्रम मार्ग' कहा। क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना! अक्रम अर्थात् बिना क्रम के, लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट!

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, हम ज्ञानी पुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। जो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। मैं खुद भगवान नहीं हूँ। मेरे भीतर प्रकट हुए दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

आत्मज्ञान प्राप्ति की प्रत्यक्ष लिंक

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) को 1958 में आत्मज्ञान प्रकट हुआ था। उसके बाद 1962 से 1988 तक देश-विदेश परिभ्रमण करके मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे।

दादाश्री ने अपने जीवनकाल में ही पूज्य डॉ. नीरू बहन अमीन (नीरू माँ) को आत्मज्ञान प्राप्त करवाने की ज्ञानसिद्धि प्रदान की थी। दादाश्री के देहविलय पश्चात् नीरू माँ उसी प्रकार मुमुक्षुजनों को सत्संग और आत्मज्ञान की प्राप्ति, निमित्त भाव से करवा रही थी।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपक भाई देसाई को दादाश्री ने सत्संग करने की सिद्धि प्रदान की थी। वर्तमान में पूज्य नीरू माँ के आशीर्वाद से पूज्य दीपक भाई देश-विदेश में निमित्त भाव से आत्मज्ञान करवा रहे हैं।

इस आत्मज्ञान प्राप्ति के बाद हज़ारों मुमुक्षु संसार में रहते हुए, सभी ज़िम्मेदारियाँ निभाते हुए भी मुक्त रहकर आत्मरमणता का अनुभव करते हैं।

निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

संपादकीय

मनुष्य जीवन तो सभी जी रहे हैं। जन्मे, पढ़ाई की, नौकरी की, शादी की, पिता बने, दादा बने और फिर अरथी उठ गई। जीवन का क्या यही क्रम होगा? इस प्रकार जीवन जीने का अर्थ क्या है? जन्म क्यों लेना पड़ता है? जीवन में क्या प्राप्त करना है? मनुष्य देह की प्राप्ति हुई इसलिए खुद मानव धर्म में होना चाहिए। मानवता सहित होना चाहिए, तभी जीवन धन्य हुआ कहलाएगा।

मानवता की परिभाषा खुद पर से ही तय करनी है। 'यदि मुझे कोई दु:ख दे तो मुझे अच्छा नहीं लगता है, इसलिए मुझे किसी को दु:ख नहीं देना चाहिए।' यह सिद्धांत जीवन के प्रत्येक व्यवहार में जिसे फिट (क्रियाकारी) हो गया, उसमें पूरी मानवता आ गई।

मनुष्य जन्म तो चार गतियों का जंक्शन (केन्द्रस्थान) है। वहाँ से चारों गतियों में जाने की छूट है। किन्तु, जैसे कारणों का सेवन किया हो, उस गति में जाना पड़ता है। मानव धर्म में रहें तो फिर से मनुष्य जन्म देखोगे और मानव धर्म से विचलित हो गए तो जानवर का जन्म पाओगे। मानव धर्म से भी आगे, सुपर ह्युमन (दैवी गुण वाला मनुष्य) के धर्म में आए और सारा जीवन परोपकार हेतु गुज़ारा तो देवगति में जन्म होता है और यदि मनुष्य जीवन में आत्मज्ञानी के पास से आत्म धर्म प्राप्त कर ले, तो अंतत: मोक्षगति-परमपद प्राप्त कर सकते हो।

परम पूज्य दादाश्री ने तो, मनुष्य अपने मानव धर्म में प्रगति करे ऐसी सुंदर समझ सत्संग द्वारा प्राप्त करवाई है। वह सब प्रस्तुत संकलन में अंकित हुआ है। वह समझ आजकल के बच्चों और युवकों तक पहुँचे तो जीवन के प्रारंभ से ही वे मानव धर्म में आ जाएँ, तो इस मनुष्य जन्म को सार्थक करके धन्य बन जाएँ, वही अभ्यर्थना।

– **डॉ. नीरू बहन अमीन**

मानव धर्म

मानवता का ध्येय

प्रश्नकर्ता : मनुष्य जीवन का ध्येय क्या है?

दादाश्री : मानवता के पचास प्रतिशत अंक मिलने चाहिए। जो मानव धर्म है, उसमें पचास प्रतिशत अंक तो आने चाहिए, यही मनुष्य जीवन का ध्येय है और यदि कोई उच्च ध्येय रखे तो नब्बे प्रतिशत अंक आने चाहिए। मानवता के गुण तो होने चाहिए न? यदि मानवता ही नहीं होगी, तो मनुष्य जीवन का ध्येय ही कहाँ रहा?

यह तो सारी 'लाइफ' (जीवन) 'फैक्चर' (खंडित) हो गई है। किसलिए जी रहे हैं, उसकी भी समझ नहीं है। मनुष्यसार क्या है? जिस गति में जाना हो वह गति मिले अथवा मोक्ष पाना हो तो मोक्ष मिले।

वह संत समागम से आए

प्रश्नकर्ता : मनुष्य का जो ध्येय है उसे प्राप्त करने के लिए क्या करना अनिवार्य है और कितने समय तक?

दादाश्री : मानवता में कौन-कौन से गुण हैं और वे कैसे प्राप्त हों, यह सब जानना चाहिए। जो मानवता के गुणों से संपन्न हों, ऐसे संत पुरुष हों, आपको उनके पास जाकर बैठना चाहिए।

यह है सच्चा मानव धर्म

अभी किस धर्म का पालन करते हो?

प्रश्नकर्ता : मानव धर्म का पालन करता हूँ।

दादाश्री : मानव धर्म किसे कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : बस, शांति!

दादाश्री : नहीं! शांति तो मानव धर्म पालन करने का फल है। किन्तु मानव धर्म अर्थात् आप किसका पालन करते हो?

प्रश्नकर्ता : कुछ भी पालन नहीं करता। किसी संप्रदाय में नहीं रहना, बस! किसी जाति में नहीं रहना, वही मानव धर्म है।

दादाश्री : नहीं, वह मानव धर्म नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर मानव धर्म क्या है?

दादाश्री : मानव धर्म का अर्थ क्या है, उस पर थोड़ी-बहुत बातें करते हैं। पूरी बात तो बहुत बड़ी चीज़ है, किन्तु हम थोड़ी बात करेंगे। किसी मनुष्य को हमारे निमित्त से दुःख न हो; अन्य जीवों की बात तो जाने दो, लेकिन अगर सिर्फ मनुष्यों को संभाल लें कि 'मेरे निमित्त से इन्हें दुःख होना ही नहीं चाहिए', तो वह मानव धर्म है।

वास्तव में मानव धर्म किसे कहा जाता है? यदि आप सेठ हैं और नौकर को बहुत धमका रहे हैं, उस समय आपको ऐसा विचार आना चाहिए कि, 'अगर मैं नौकर होता तो क्या होता?' इतना विचार आए तो फिर आप उसे मर्यादा में रहकर धमकाएँगे, ज़्यादा नहीं कहेंगे। यदि आप किसी का नुकसान करते हो तो उस समय आपको यह विचार आना चाहिए कि 'मैं सामने वाले का नुकसान कर रहा हूँ, परंतु यदि कोई मेरा नुकसान करे तो क्या होगा?'

मानव धर्म यानी, हमें जो पसंद है, उतना ही लोगों को देना और हमें जो नापसंद है, वह दूसरों को नहीं देना। अगर हमें कोई थप्पड़ मारे तो वह हमें अच्छा नहीं लगता तो हमें दूसरों को थप्पड़ नहीं मारना चाहिए। हमें कोई गाली दे वह हमें अच्छा नहीं लगता,

तो फिर हमें भी किसी और को गाली नहीं देनी चाहिए। मानव धर्म यानी, हमें जो नहीं भाता वह दूसरों के साथ न करें। हमें जो अच्छा लगे वही दूसरों के साथ करना, उसे मानव धर्म कहेंगे। ऐसा ध्यान रखता है या नहीं? किसी को परेशान करते हो? नहीं? तब तो अच्छा है।

'मेरी वजह से किसी को परेशानी न हो', ऐसा रहे तो काम ही बन जाएगा!

रास्ते में रुपये मिलें तब...

किसी के पंद्रह हज़ार रुपये, सौ-सौ रुपयों के नोटों का एक बंडल हमें रास्ते में मिले, तब हमारे मन में यह विचार आना चाहिए कि 'यदि मेरे इतने रुपये खो जाएँ तो मुझे कितना दुःख होगा, तो फिर जिसके ये रुपये हैं उसे कितना दुःख हो रहा होगा?' इसलिए हमें अखबार में विज्ञापन देना चाहिए कि इस विज्ञापन का खर्च देकर, सबूत देकर, अपना बंडल ले जाइए। बस, इस तरह मानवता समझनी है। क्योंकि ऐसा तो हम समझ सकते हैं न! जैसे हमें दुःख होता है वैसे सामने वाले को भी दुःख होता होगा। प्रत्येक बात में इसी प्रकार आपको विचार आने चाहिए। किन्तु आजकल तो ऐसी मानवता विस्मृत हो गई है, गुम हो गई है! इसी के दुःख हैं सारे! लोग तो सिर्फ अपने स्वार्थ में ही पड़े हैं। वह मानवता नहीं कहलाती।

अभी तो लोग ऐसा समझते हैं कि 'जो मिला सो मुफ्त ही है न!' अरे भाई! तो फिर यदि तेरा कुछ खो गया, तो वह भी दूसरे के लिए मुफ्त ही है न!

प्रश्नकर्ता : किन्तु यदि ऐसा रखे कि 'मुझे ये जो पैसे मिलें हैं, तो दूसरा कुछ नहीं, अपने पास नहीं रखने हैं लेकिन गरीबों में बाँट दूँगा', तो?

दादाश्री : नहीं, गरीबों में नहीं, वे पैसे उसके मालिक तक

कैसे पहुँचे, उसे ढूँढकर और खबर देकर, उसे पहुँचा देना। यदि फिर भी उस आदमी का पता नहीं चले, वह परदेसी हो, तो फिर हमें उन पैसों का उपयोग किसी भी अच्छे कार्य के लिए करना चाहिए, किन्तु खुद के पास नहीं रखने चाहिए।

यदि आपने किसी के लौटाए होंगे तो आपको भी लौटाने वाले मिल जाएँगे। अगर आप ही नहीं लौटाएँगे तो आपका कैसे वापस मिलेगा? अत: हमें खुद की समझ बदलनी चाहिए। ऐसा तो नहीं चलेगा न! यह मार्ग ही नहीं कहलाएगा न! इतने रुपये कमाते हो फिर भी सुखी नहीं हो, ऐसा कैसे?

यदि आप अभी किसी से दो हज़ार रुपये उधार लाए और फिर लौटाने की सुविधा नहीं हो और मन में ऐसा भाव हुआ, 'अब हम उसे कैसे लौटाएँगे? उसे मना कर देंगे'। अब ऐसा भाव आते ही मन में विचार आना चाहिए कि यदि मुझसे कोई ले जाए और वह ऐसा भाव करे तो मेरी क्या दशा होगी? अर्थात्, इस प्रकार से हम रहें कि, हमारे भाव नहीं बिगड़ें, तो वही मानव धर्म है।

किसी को दु:ख न हो, वही सब से बड़ा ज्ञान है। इतना सँभाल लेना। भले ही कंदमूल नहीं खाते हों, लेकिन यदि मानवता का पालन करना नहीं आया तो व्यर्थ है। ऐसे तो लोगों का हड़पकर खाने वाले कई हैं, जो जानवर योनि में गए हैं और अभी तक नहीं लौटे हैं। यह तो सब नियम से हैं, यहाँ अँधेर नगरी नहीं है। यहाँ गप्प नहीं चलेगी, पोलम्पोल। अँधेर नगरी है क्या? यह राज नियमबद्ध है या अंधेर नगरी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, स्वाभाविक राज है!

दादाश्री : हाँ, स्वाभाविक राज है। *पोल* (अंधेर) नहीं चलेगी। आपकी समझ में आया? 'मुझे जितना दु:ख होता है, उतना ही उसे भी होता होगा या नहीं?' जिसे ऐसा विचार आए वे सभी मानव धर्मी हैं, वर्ना मानव धर्म कहलाएगा ही कैसे?

उधार लिए हुए पैसे नहीं लौटाए तो?

यदि हमें किसी ने दस हज़ार रुपये दिए हों और हम उसे नहीं लौटाएँ, तो उस समय हमारे मन में विचार आना चाहिए कि 'अगर मैंने किसी को दिए हों और वह मुझे नहीं लौटाए तो मुझे कितना दु:ख होगा? इसलिए जितना जल्दी हो सके, उसे लौटा दूँ'। खुद के पास नहीं रखने हैं। मानव धर्म यानी क्या? हमें जैसे दु:ख होता है वैसे सामने वाले को भी दु:ख होता ही है। किन्तु हर एक का मानव धर्म अलग-अलग होता है। जिसका जैसा डेवेलपमेन्ट (आंतरिक विकास) होता है वैसा ही उसका मानव धर्म होता है। मानव धर्म एक ही प्रकार का नहीं होता।

किसी को दु:ख देते समय खुद के मन में ऐसा हो कि 'यदि मुझे कोई दु:ख दे तो क्या होगा?' अत: फिर दु:ख देना बंद कर देता है। वही मानवता है।

मेहमान घर आएँ तब...

हम यदि किसी के घर मेहमान बनकर जाएँ तो हमें मेज़बान के बारे में सोचना चाहिए, कि यदि हमारे घर पंद्रह दिन मेहमान रहें तो क्या होगा? इसलिए मेज़बान पर बोझ मत बनना। दो दिन रहने के बाद बहाना बनाकर होटल में चले जाना।

लोग अपने खुद के सुख में ही मग्न हैं। दूसरों के सुख में मेरा सुख है, ऐसी बात छूटती ही जा रही है। 'दूसरों के सुख में मैं सुखी हूँ' ऐसा सब अपने यहाँ खत्म हो गया है और अपने सुख में ही मग्न हैं कि 'मुझे चाय मिल गई'। बस!

आपको अन्य (और) कुछ ध्यान रखने की ज़रूरत नहीं है। 'कंदमूल नहीं खाना चाहिए' वह नहीं जानो तो चलेगा किन्तु अगर इतना जान लो तो बहुत हो गया। आपको जो दु:ख होता है वैसा दु:ख किसी को नहीं हो, इस प्रकार से रहा जाए तो उसे मानव धर्म

कहेंगे। सिर्फ इतना ही धर्म पाले तो बहुत हो गया। अभी ऐसे कलियुग में जो मानव धर्म का पालन करते हैं, उन्हें मोक्ष के लिए मुहर लगा देनी पड़ेगी। किन्तु सत्युग में सिर्फ मानव धर्म का पालन करने से नहीं चलता था। यह तो अभी, इस काल में, कम प्रतिशत मार्क्स होते हुए भी पास करना पड़ता है। मैं क्या कहना चाहता हूँ वह आपको समझ में आ रहा है? अतः किसमें पाप है और किसमें नहीं, इतना समझ जाओ।

अन्यत्र दृष्टि बिगाड़ी, वहाँ मानव धर्म चूका

फिर इससे आगे का मानव धर्म यानी क्या कि किसी स्त्री को देखकर आकर्षण हो तो तुरंत ही विचार करे कि यदि मेरी बहन को कोई ऐसे बुरी नज़र से देखे तो क्या होगा? मुझे दुःख होगा। ऐसा सोचे, उसका नाम मानव धर्म। 'इसलिए, मुझे किसी स्त्री को बुरी नज़र से नहीं देखना चाहिए', ऐसा पछतावा करे। ऐसा उसका डेवेलपमेन्ट होना चाहिए न?

मानवता यानी क्या? खुद की पत्नी पर कोई दृष्टि बिगाड़े तो खुद को अच्छा नहीं लगता, इसी प्रकार वह भी सामने वाले की पत्नी पर दृष्टि न बिगाड़े। खुद की बेटियों पर कोई दृष्टि बिगाड़े तो खुद को अच्छा नहीं लगता, वैसे ही वह औरों की बेटियों पर दृष्टि न बिगाड़े। क्योंकि यह बात हमेशा ध्यान में रहनी ही चाहिए कि यदि मैं किसी की लड़की पर दृष्टि बिगाड़ूँ तो कोई मेरी लड़की पर दृष्टि बिगाड़ेगा ही। ऐसा ख्याल में रहना ही चाहिए तो वह मानव धर्म कहलाएगा।

मानव धर्म अर्थात् जो हमें पसंद नहीं है वह औरों के साथ कभी भी नहीं करना। मानव धर्म लिमिटेड (सीमीत) है, लिमिट से बाहर नहीं, किन्तु उतना ही यदि वह करे तो बहुत हो गया।

खुद की स्त्री हो तो भगवान ने कहा कि तूने शादी की है उसे संसार ने स्वीकार किया है, तेरे ससुराल वालों ने स्वीकार किया है,

तेरे परिवारजन स्वीकार करते हैं, सभी स्वीकार करते हैं। पत्नी के साथ सिनेमा देखने जाए तो क्या कोई उँगली उठाएगा? और यदि पराई स्त्री के साथ जाए तो?

प्रश्नकर्ता : अमरीका में इस पर आपत्ति नहीं उठाते।

दादाश्री : अमरीका में आपत्ति नहीं उठाते, किन्तु हिन्दुस्तान में आपत्ति उठाएँगे न? यह बात सही है, लेकिन वहाँ के लोग यह बात नहीं समझते। किन्तु हम जिस देश में जन्मे हैं, वहाँ ऐसे व्यवहार के लिए आपत्ति उठाते हैं न! और ऐसा आपत्तिजनक कार्य ही गुनाह है।

यहाँ पर तो अस्सी प्रतिशत मनुष्य जानवर गति में जाने वाले हैं। वर्तमान के अस्सी प्रतिशत मनुष्य! क्योंकि मनुष्य जन्म पाकर क्या करते हैं? मिलावट करते हैं, बिना हक़ का भोगते हैं, बिना हक़ का लूट लेते हैं, बिना हक़ का प्राप्त करने की इच्छा करते हैं, ऐसे विचार करते हैं अथवा परस्त्री पर दृष्टि बिगाड़ते हैं। मनुष्य को खुद की पत्नी भोगने का हक़ है, लेकिन बिना हक़ की, परस्त्री पर दृष्टि भी नहीं बिगाड़ सकते, उसका भी दंड मिलता है। सिर्फ दृष्टि बिगाड़ी उसका भी दंड, उसे जानवर गति प्राप्त होती है। क्योंकि वह पाशवता कहलाती है। (सचमुच) मानवता होनी चाहिए।

मानव धर्म का अर्थ क्या? हक़ का भुगतना वह मानव धर्म। ऐसा आप स्वीकार करते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : ठीक है।

दादाश्री : और बिना हक़ के बारे में?

प्रश्नकर्ता : स्वीकार करना नहीं चाहिए। जानवर गति में जाएँगे, इसका कोई प्रमाण है?

दादाश्री : हाँ, प्रमाण सहित है। बिना प्रमाण, ऐसे ही गप्प नहीं मार सकते।

मनुष्यपन कब तक रहेगा? 'बिना हक़ का किंचित् मात्र नहीं भोगे' तब तक मनुष्यपन रहेगा। खुद के हक़ का भोगे, वह मनुष्य जन्म पाता है, बिना हक़ का भोगे वह जानवर गति में जाता है। अपने हक़ का दूसरों को दे देंगे तो देवगति होगी और मारकर बिना हक़ का ले लेंगे तो नर्कगति मिलती है।

मानवता का अर्थ

मानवता यानी 'मेरा जो है उसे मैं भोगूँ और तेरा जो है उसे तू भोग'। मेरे हिस्से में जो आया वह मेरा और तेरे हिस्से में जो आया वह तेरा। पराये के प्रति दृष्टि नहीं करना, यह मानवता का अर्थ है। फिर पाशवता यानी 'मेरा वह भी मेरा और तेरा वह भी मेरा!' और दैवीगुण किसे कहेंगे? 'तेरा वह तेरा, किन्तु जो मेरा वह भी तेरा।' जो परोपकारी होते हैं वे अपना हो वह भी औरों को दे देते हैं। ऐसे दैवी गुण वाले भी होते हैं या नहीं होते? क्या आजकल आपको कहीं मानवता दिखाई देती है?

प्रश्नकर्ता : किसी जगह देखने में आती है और किसी जगह देखने में नहीं भी आती।

दादाश्री : किसी मनुष्य में पाशवता देखने में आती है? जब वह सींग घुमाए तो क्या हम नहीं समझ जाएँगे कि यह भैंसे जैसा है, इसलिए सींग मारने आता है! उस समय हमें हट जाना चाहिए। ऐसी पशुता वाला मनुष्य तो राजा को भी नहीं छोड़ता! सामने यदि राजा आता हो तो भी भैंस का भाई मस्ती से चल रहा होता है, वहाँ राजा को घूमकर निकल जाना पड़े लेकिन वह नहीं हटता।

यह है मानवता से भी बढ़कर गुण

फिर मानवता से भी ऊपर, ऐसा 'सुपर ह्युमन' (महामानव) किसे कहेंगे? आप दस बार किसी का नुकसान करें फिर भी, जब आपको ज़रूरत है तब वह व्यक्ति आपकी मदद करे! आप फिर

उसका नुकसान करें, तब भी आपको काम हो तो उस समय वह आपकी 'हैल्प' (मदद) करे। उसका स्वभाव ही हैल्प करने का है। इसलिए हम समझ जाएँ कि यह मनुष्य 'सुपर ह्युमन' है। यह दैवी गुण कहलाता है। ऐसे मनुष्य तो कभी-कभार ही होते हैं। अभी तो ऐसे मनुष्य मिलते ही नहीं न! क्योंकि लाख मनुष्यों में एकाध ऐसा हो, ऐसा इसका प्रमाण हो गया है।

मानवता के धर्म से विरुद्ध किसी भी धर्म का आचरण करे, यदि पाशवी धर्म का आचरण करे तो पशु में जाता है, यदि राक्षसी धर्म का आचरण करे तो राक्षस में जाता है अर्थात् नर्कगति में जाता है और यदि सुपर ह्युमन धर्म का आचरण करे तो देवगति में जाता है। ऐसा आपको समझ आया, मैं क्या कहना चाहता हूँ, वह?

जितना जानते हैं, उतना वे धर्म सिखाते हैं

यहीं पर (भारतवर्ष में) संत पुरुष और ज्ञानीपुरुष जन्म लेते हैं और वे लोगों को लाभ पहुँचाते हैं। वे खुद पार उतर चुके होते हैं और औरों को भी पार उतारते हैं। खुद जैसे बन चुके हैं वैसा ही बना देते हैं। खुद यदि मानव धर्म का पालन करते हैं तो वे मानव धर्म सिखाते हैं। इससे भी आगे जो है, वह दैवी धर्म सिखाता है। जो 'अति मानव' (सुपर ह्युमन) का धर्म जानते हैं, वे अति मानव का धर्म सिखाते हैं। अतः जो जिस धर्म को जानता है, वही सिखाता है और जो इन सभी अवलंबनों से मुक्तता का ज्ञान जानते हैं, वे मुक्त हो चुके होते हैं, वे मुक्तता का ज्ञान भी दे सकते हैं।

ऐसा है पाशवता का धर्म

प्रश्नकर्ता : वास्तव में धर्म तो मानव धर्म है। अब उसमें खास यह जानना है कि वास्तव में मानव धर्म यानी 'हमसे किसी को भी दुःख न हो'। यह उसकी सब से बड़ी नींव है। पैसे का, लक्ष्मी का, सत्ता का, वैभव का, इन सभी का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए, उनका

सदुपयोग करना चाहिए। ये सब मानव धर्म के सिद्धांत हैं ऐसा मेरा मानना है। आपसे जानना चाहता हूँ कि यह ठीक है?

दादाश्री : वास्तव में मानव धर्म यही है कि किसी भी जीवमात्र को किंचित् मात्र दुःख नहीं देना चाहिए। कोई हमें दुःख दे तो वह पाशवता करता है किन्तु हमें पाशवता नहीं करनी चाहिए, यदि मानव रहना हो तो और यदि मानव धर्म का अच्छी तरह पालन करें तो फिर मोक्ष प्राप्ति में देर ही नहीं लगती। मानव धर्म ही यदि समझ जाएँ तो बहुत हो गया। दूसरा कोई धर्म समझने जैसा है ही नहीं। मानव धर्म यानी पाशवता नहीं करना, वह मानव धर्म है। यदि हमें कोई गाली दे तो वह पाशवता है, किन्तु हम पाशवता न करें, हम मनुष्य की तरह समता रखें और उससे पूछें कि, 'भाई, मेरा क्या गुनाह है? तू मुझे बता तो मैं अपना गुनाह सुधार लूँ'। मानव धर्म ऐसा होना चाहिए कि किसी को हमसे किंचित् मात्र दुःख न हो। किसी से हमें दुःख हो तो वह उसका पाशवी धर्म है। तब उसके बदले में हम पाशवी धर्म नहीं कर सकते। पाशवी के सामने पाशवी नहीं होना, यही मानव धर्म। आपको समझ में आता है? मानव धर्म में टिट फॉर टेट (जैसे को तैसा) नहीं चलता। कोई हमें गाली दे और हम उसे गाली दें, कोई मनुष्य हमें मारे तो हम उसे मारें, फिर तो हम पशु ही हो गए न! मानव धर्म रहा ही कहाँ? अतः धर्म ऐसा होना चाहिए कि किसी को दुःख न हो।

यों कहलाता है इंसान मगर इंसानियत तो चली गई होती है। तो फिर वह किस काम का? जिन तिल में तेल ही न हो तो वे तिल किस काम के? फिर उसे तिल कैसे कहा जाए? उसकी इंसानियत तो चली गई होती है। इंसानियत तो पहले चाहिए। तभी सिनेमा वाले गाते हैं न, 'कितना बदल गया इंसान...' तब फिर रहा क्या? इंसान बदल गया तो पूंजी खो गई सारी! अब किसका व्यापार करेगा, भाई?

अंडरहैन्ड के साथ कर्तव्य निभाते...

प्रश्नकर्ता : हमारे हाथ नीचे कोई काम करता हो, हमारा लड़का

हो या फिर ऑफिस में कोई हो, या फिर कोई भी हो तो वह अपना कर्तव्य चूक गया हो तो उस समय हम उसे सच्ची सलाह देते हैं। अब इससे उसे दुःख होता है तो उस समय विरोधाभास उत्पन्न होता हो ऐसा लगता है। वहाँ क्या करना चाहिए?

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं है। जब तक आपकी दृष्टि सही है, तब तक हर्ज नहीं है। किन्तु उस पर आपका पाशवता का (दुःख देने का) इरादा नहीं होना चाहिए और विरोधाभास उत्पन्न हो तो फिर हमें उनसे माफी माँगनी चाहिए अर्थात् उस भूल को स्वीकार कर लो। पूर्णतः मानव धर्म होना चाहिए।

नौकर से नुकसान हो, तब...

इन लोगों में मतभेद क्यों होता है?

प्रश्नकर्ता : मतभेद होने का कारण स्वार्थ है।

दादाश्री : स्वार्थ तो वह कहलाता है कि झगड़ा न करें। स्वार्थ में हमेशा सुख होता है।

प्रश्नकर्ता : किन्तु आध्यात्मिक स्वार्थ हो तो उसमें सुख होता है, भौतिक स्वार्थ हो तो उसमें तो दुःख ही होता है न!

दादाश्री : हाँ, मगर भौतिक स्वार्थ भी ठीक होता है। खुद का सुख जो है वह चला नहीं जाए, कम नहीं हो। वह सुख बढ़े, ऐसे बरतते हैं। किन्तु यह क्लेश होने से भौतिक सुख चला जाता है। पत्नी के हाथ से गिलास गिर जाए और उसमें बीस रुपये का नुकसान हुआ तो तुरंत ही मन ही मन अकुलाने लगता है कि 'बीस रुपये का नुकसान कर दिया'। अरे मूर्ख, इसे नुकसान नहीं कहते। यह तो उसके हाथ से गिर पड़ा, यदि तेरे हाथ से गिर जाता तो तू क्या न्याय करता? उसी तरह हमें न्याय करना चाहिए। मगर वहाँ हम ऐसा न्याय करते हैं कि 'इसने नुकसान किया'। किन्तु क्या वह कोई बाहरी व्यक्ति है? और यदि बाहरी व्यक्ति हो तो भी, नौकर हो तो भी ऐसा नहीं करना

चाहिए। क्योंकि वह किस नियम के आधार पर गिर जाता है, वह गिराता है या गिर जाता है, इसका विचार नहीं करना चाहिए? नौकर क्या जान-बूझकर गिराता है?

अतः किस धर्म का पालन करना है? कोई भी नुकसान करे, हमें कोई भी बैरी नज़र आए तो वह वास्तव में हमारा बैरी नहीं है। कोई नुकसान कर सके ऐसा है ही नहीं। इसलिए उसके प्रति द्वेष नहीं होना चाहिए। फिर चाहे वे हमारे घर के लोग हों या नौकर से गिलास गिर पड़े तो भी उन्हें नौकर नहीं गिराता। उसे गिराने वाला कोई और है। इसलिए नौकर पर बहुत क्रोध मत करना। उसे धीरे-से कहना, 'भाई, ज़रा धीरे चल, तेरा पाँव तो नहीं जला न?' ऐसे पूछना। हमारे दस-बारह गिलास टूट जाएँ तो भीतर कुढ़न-जलन शुरू हो जाती है। जब तक मेहमान बैठे हों तब तक क्रोध नहीं करता किन्तु (भीतर) चिढ़ता रहता है और मेहमान के जाते ही फिर तुरंत उसकी खबर ले लेता है। ऐसा करने की ज़रूरत नहीं है। यह सब से बड़ा अपराध है। कौन करता है यह जानता नहीं है। जगत् तो आँखों से जो दिखता है, उस निमित्त को ही काटने दौड़ता है।

मैंने इतने छोटे से बच्चे को कहा कि जा, इस गिलास को बाहर फेंक आ, तो उसने कंधे उचकाकर इन्कार कर दिया। कोई नुकसान नहीं करता। एक बच्चे से मैंने कहा, 'दादा के जूते बाहर फेंक आ'। तो कंधे ऐसे करके कहने लगा, 'इन्हें नहीं फेंकते'। कितनी सही समझ है! अर्थात्, ऐसे तो कोई नहीं फेंकता। नौकर भी नहीं तोड़ता। ये लोग तो मूर्ख हैं, नौकरों को परेशान कर देते हैं। अरे, तू जब नौकर होगा तब तुझे पता चलेगा। अतः हम ऐसा नहीं करेंगे तो यदि हमारी कभी नौकर होने की बारी आई तो हमें सेठ अच्छा मिलेगा।

खुद को औरों की जगह पर रखना वही मानव धर्म। दूसरा धर्म तो फिर अध्यात्म, वह तो उससे आगे का रहा। किन्तु इतना मानव धर्म तो आना चाहिए।

जितना चारित्रबल, उतना प्रवर्तन

प्रश्नकर्ता : मगर यह बात समझते हुए भी कई बार हमें ऐसा रहता नहीं है, उसका क्या कारण है?

दादाश्री : क्योंकि यह ज्ञान जाना ही नहीं है। सच्चा ज्ञान जाना नहीं है। जो ज्ञान जाना है वह सिर्फ किताबों द्वारा जाना हुआ है मगर किसी क्वॉलिफाईड (योग्य) गुरु से नहीं जाना है। क्वॉलिफाईड गुरु अर्थात् वे जो जो बताएँ वह हमें अंदर एक्ज़ेक्ट (यथार्थ रूप से) हो जाए। फिर मैं यदि बीड़ियाँ पीता रहूँ और आपसे कहूँ कि, 'बीड़ी छोड़ दीजिए' तो उसका कोई परिणाम नहीं आता। वह तो चारित्रबल चाहिए। उसके लिए तो गुरु संपूर्ण चारित्रबल वाले हों, तभी हम से पालन होगा, वर्ना यों ही पालन नहीं होगा।

अपने बच्चे से कहें कि इस बोतल में ज़हर है। देख, दिखता है न सफेद! तू इसे छूना मत। तो वह बालक क्या पूछता है? ज़हर क्या चीज़ है? तब आप बताते हैं कि ज़हर यानी इससे मर जाते हैं। तब वह फिर पूछता है, 'मर जाना यानी क्या?' तब आप बताते हैं, ''कल वहाँ पर उनको बाँधकर ले जा रहे थे न, तू कहता था, 'मत ले जाओ, मत ले जाओ।' लेकिन मर गए तो ले जाते हैं फिर।'' इससे उसकी समझ में आ जाता है और फिर उसे नहीं छूता। ज्ञान समझा हुआ होना चाहिए।

एक बार बता दिया, 'यह ज़हर है!' फिर वह ज्ञान आपको हाज़िर ही रहना चाहिए और जो ज्ञान हाज़िर नहीं रहता हो, वह ज्ञान ही नहीं, वह अज्ञान ही है। यहाँ से अहमदाबाद जाने का ज्ञान, आपको नक्शा आदि दे दिया और फिर उसके अनुसार यदि अहमदाबाद नहीं आए तो वह नक्शा ही गलत है, एक्ज़ेक्ट आना ही चाहिए।

चार गतियों में भटकने के कारण...

प्रश्नकर्ता : मनुष्य के कर्तव्य के बारे में आप कुछ बताइए।

दादाश्री : मनुष्य के कर्तव्य में, जिसे फिर मनुष्य ही होना है तो उसकी लिमिट (सीमा) बताऊँ। ऊपर नहीं चढ़ना हो अथवा नीचे नहीं उतरना हो, ऊपर देवगति है और नीचे जानवर गति है और उससे भी नीचे नर्कगति है। ऐसी गतियाँ हैं। आप मनुष्य के बारे में ही पूछ रहे हैं?

प्रश्नकर्ता : देह है तब तक तो मनुष्य जैसे ही कर्तव्य पालन करने होंगे न?

दादाश्री : मनुष्य के कर्तव्य पालन करते हैं, इसलिए तो मनुष्य हुए। उसमें हम उत्तीर्ण हो चुके हैं तो अब किसमें उत्तीर्ण होना है? संसार दो तरह से हैं। एक, मनुष्य जन्म में आने के बाद क्रेडिट जमा की तो उच्च गति में जाते हैं। डेबिट जमा की तो नीचे जाते हैं और यदि क्रेडिट-डेबिट दोनों व्यापार बंद कर दें तो मुक्ति हो जाए। ये पाँचों जगह खुली हैं। चार गतियाँ हैं। बहुत क्रेडिट हो तो देवगति मिलती है। क्रेडिट ज़्यादा और डेबिट कम हो तो मनुष्य गति मिलती है। डेबिट ज़्यादा और क्रेडिट कम हो तो जानवर गति और संपूर्णतया डेबिट वह नर्कगति। ये चार गतियाँ और पाँचवी जो है वह मोक्षगति। ये चारों गतियाँ मनुष्य प्राप्त कर सकते हैं और पाँचवी गति तो हिन्दुस्तान के मनुष्य ही प्राप्त कर सकते हैं। 'स्पेशल फॉर इन्डिया।' (हिन्दुस्तान के लिए खास) दूसरों के लिए वह नहीं है।

अब यदि उसे मनुष्य होना है तो उसे बुज़ुर्गों की, माँ-बाप की सेवा करनी चाहिए, गुरु की सेवा करनी चाहिए, लोगों के प्रति ओब्लाइजिंग नेचर (परोपकारी स्वभाव) रखना चाहिए। व्यवहार ऐसा रखना चाहिए कि दस दो और दस लो, इस प्रकार व्यवहार शुद्ध रखें तो सामने वाले के साथ कुछ लेन-देन नहीं रहता। इस तरह व्यवहार करो, संपूर्ण शुद्ध व्यवहार। मानवता में तो, किसी को मारते समय या किसी को मारने से पहले ख्याल आता है। मानवता हो तो ख्याल आना ही चाहिए कि यदि मुझे मारे तो क्या हो? यह ख्याल पहले

आना चाहिए तब मानव धर्म रह सकेगा, वर्ना नहीं रहेगा। इसमें रहकर सारा व्यवहार किया जाए तो फिर से मनुष्यपन प्राप्त होगा, वर्ना मनुष्यपन फिर से प्राप्त होना भी मुश्किल है।

जिसे इसका पता नहीं है कि इसका परिणाम क्या होगा तो वह मनुष्य ही नहीं कहलाता। खुली आँखों से सोएँ वह अजागृति, वह मनुष्य कहलाता ही नहीं। सारा दिन बिना हक़ का भोगने की ही सोचते रहें, मिलावट करें, वे सभी जानवर गति में जाते हैं। यहाँ से, मनुष्य में से सीधा जानवर गति में जाकर फिर वहाँ भुगतता है।

अपना सुख दूसरों को दे दे, अपने हक़ का सुख भी औरों को दे दें तो वह सुपर ह्युमन कहलाता है और इसलिए देवगति में जाता है। खुद को जो सुख भोगना है, खुद के लिए जो निर्माण हुआ, वह खुद को ज़रूरत है फिर भी औरों को दे देता है, वह सुपर ह्युमन है। अतः देवगति प्राप्त करता है और जो व्यर्थ नुकसान पहुँचाता है, खुद को कोई फायदा नहीं हो फिर भी सामने वाले को भारी नुकसान पहुँचाता है, वह नर्कगति में जाता है। जो लोग बिना हक़ का भोगते हैं, वे तो अपने फायदे के लिए भोगते हैं, इसलिए जानवर में जाते हैं। किन्तु जो बिना किसी कारण लोगों के घर जला देते हैं, और भी ऐसे कार्य करते हैं, दंगा-फ़साद करते हैं, वे सभी नर्क के अधिकारी हैं। जो अन्य जीवों की जान लें अथवा तालाब में ज़हर मिलाएँ, अथवा कुँए में ऐसा कुछ डालें, वे सभी नर्क के अधिकारी हैं। सभी ज़िम्मेदारियाँ अपनी खुद की है। एक बालभर की ज़िम्मेदारी भी संसार में खुद की ही है।

कुदरत के घर ज़रा सा भी अन्याय नहीं है। यहाँ मनुष्यों में शायद अन्याय हो सकता है, लेकिन कुदरत के घर तो बिल्कुल न्यायसंगत है। कभी भी अन्याय हुआ ही नहीं है। इतना सब न्याय में ही रहता है और जो हो रहा है वह भी न्याय ही हो रहा है, ऐसा यदि समझ में आए तो वह 'ज्ञान' कहलाता है। जो हो रहा है 'वह

गलत हुआ, यह गलत हुआ, यह सही हुआ' ऐसा बोलते हैं वह 'अज्ञान' कहलाता है। जो हो रहा है वह करेक्ट (सही) ही है।

अन्डरहैन्ड के साथ मानव धर्म

यदि कोई हम पर गुस्सा करे तो हमसे सहन नहीं होता किन्तु सारा दिन दूसरों पर गुस्सा करते रहते हैं। अरे! यह कैसी अक्ल? यह मानव धर्म नहीं कहलाता। खुद पर यदि कोई ज़रा सा गुस्सा करे तो सहन नहीं कर सकता और वह खुद सारा दिन सब के ऊपर गुस्सा करता रहता है, क्योंकि वे दबे हुए हैं इसलिए ही न? दबे हुओं को मारना तो बहुत बड़ा अपराध कहलाता है। मारना हो तो *ऊपरी* (बॉस, वरिष्ठ मालिक) को मार! भगवान को अथवा *ऊपरी* को, क्योंकि वे आपके *ऊपरी* हैं, शक्तिमान हैं। यह तो अन्डरहैन्ड अशक्त है, इसलिए ज़िंदगीभर उसे झिड़काता रहता है। मैंने तो अन्डरहैन्ड चाहे कैसा भी गुनहगार रहा हो तो भी उसे ह्म4आपके यहाँ कोई नौकरी करता हो तो उसे कभी भी तिरस्कृत मत करना, छेड़ना मत। सभी को सम्मानपूर्वक रखना। क्या पता किसी से क्या लाभ हो जाए!

प्रत्येक कौम में मानव धर्म

प्रश्नकर्ता : मनुष्य गति की चौदह लाख योनियाँ, लेयर्स (स्तर) हैं। किन्तु यों तो मानव जाति की तरह देखें तो बायोलॉजिकली (जैविक) किसी में कोई अंतर नज़र नहीं आता है, सभी समान ही लगते हैं लेकिन इसमें ऐसा समझ में आता है कि बायोलॉजिकल अंतर भले न हो, किन्तु जो उनका मानस है...

दादाश्री : वह डेवेलपमेन्ट (आंतरिक विकास) है। उसके भेद इतने सारे हैं।

प्रश्नकर्ता : अलग-अलग लेयर्स होने के बावजूद बायोलॉजिकली सभी समान ही हैं तो फिर उसका कोई एक कॉमन धर्म हो सकता है न?

दादाश्री : कॉमन धर्म तो मानव धर्म, वह अपनी समझ के अनुसार मानव धर्म निभा सकता है। प्रत्येक मनुष्य अपनी समझ के अनुसार मानव धर्म निभाता है, किन्तु जो सही अर्थ में मानव धर्म अदा करते हैं तो वे सब से उत्तम कहलाएँगे। मानव धर्म तो बहुत श्रेष्ठ है किन्तु मानव धर्म में आए तब न? लोगों में मानव धर्म रहा ही कहाँ है?

मानव धर्म तो बहुत सुंदर है परंतु वह डेवेलपमेन्ट के अनुसार होता है। अमरीकन का मानव धर्म अलग और हमारा मानव धर्म अलग होता है।

प्रश्नकर्ता : उसमें भी फर्क है, दादा जी? किस तरह फर्क है?

दादाश्री : बहुत फर्क होता है।

हमारी ममता और उनकी ममता में फर्क होता है। यानी माता-पिता के प्रति जितनी ममता होती है उतनी उनमें नहीं होती। इसलिए ममता कम होने से भाव में फर्क पड़ता है, उतना कम होता है।

प्रश्नकर्ता : जितनी ममता कम होती है उतना भाव में फर्क पड़ जाता है?

दादाश्री : उसी मात्रा में मानव धर्म होता है। अत: हमारे जैसा मानव धर्म नहीं होता। वे लोग तो मानव धर्म में ही हैं। करीब अस्सी प्रतिशत लोग तो मानव धर्म में ही हैं, सिर्फ हमारे लोग ही नहीं हैं। बाकी सभी उनके हिसाब से तो मानव धर्म में ही हैं।

मानवता के प्रकार, अलग-अलग

प्रश्नकर्ता : ये जो मानव समूह हैं, उनकी जो समझ है, चाहे जैन हों, वैष्णव हों या क्रिश्चियन हों लेकिन वे तो सभी जगह एक समान ही होते हैं न?

दादाश्री : ऐसा है कि जैसा डेवेलपमेन्ट हुआ हो, ऐसी उसकी समझ होती है। ज्ञानी, वे भी मनुष्य ही हैं न!

ज्ञानी की मानवता, अज्ञानी की मानवता, पापी की मानवता, पुण्यशाली की मानवता, सभी की मानवता अलग-अलग होती है। मनुष्य एक ही प्रकार के हैं फिर भी!

ज्ञानीपुरुष की मानवता अलग प्रकार की होती है और अज्ञानी की मानवता अलग प्रकार की होती है। मानवता सभी में होती है, अज्ञानी में भी मानवता होती है। जो अनडेवेलप (अविकसित) हों उसकी भी मानवता, किन्तु वह मानवता अलग प्रकार की होती है, वह अनडेवेलप और यह डेवेलप और पापी की मानवता अर्थात्, हमें यदि सामने चोर मिले तब उसकी मानवता कैसी? कहेगा 'खड़े रहो'। हम समझ जाएँ कि यही उसकी मानवता है। उसकी मानवता हमने देख ली न? वह कहे, 'दे दो'। तब हम कहें, 'ये ले भाई, जल्दी से'। तू हमें मिला, वह तेरा पुण्य है न!

एक डरपोक आदमी मुझसे कहने लगा, 'अब तो टैक्सी में नहीं घूम सकते'। मैंने पूछा, 'क्या हुआ भाई? इतनी सारी टैक्सियाँ हैं और नहीं घूम सकते, ऐसा क्या हुआ? कोई नया सरकारी कानून आया है क्या?' तब वह बोला, 'नहीं, टैक्सी वाले लूट लेते हैं। टैक्सी में मार-ठोककर लूट लेते हैं'। 'अरे, ऐसी नासमझी की बातें आप कब तक करते रहेंगे?' लूटना नियम के अनुसार है या नियम के बाहर है? रोज़ाना चार लोग लूट लिए जाते हैं, अब वह इनाम आपको लगेगा, इसका विश्वास आपको कैसे हो गया? वह इनाम तो किसी हिसाब वाले को किसी दिन लगता है, क्या हर रोज़ इनाम लगता होगा?

ये क्रिश्चियन भी पुनर्जन्म नहीं समझते हैं। चाहे कितना भी आप उनसे कहो कि आप पुनर्जन्म को क्यों नहीं समझते? फिर भी वे नहीं मानते। किन्तु हम (वे गलत हैं) ऐसा बोल ही नहीं सकते, क्योंकि यह मानवता के विरुद्ध है। कुछ भी बोलने से यदि सामने वाले को ज़रा सा भी दुःख हो, वह मानव धर्म के विरुद्ध है। आपको उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए।

ऐसे चूक गए मानव धर्म

मानव धर्म मुख्य चीज़ है। मानव धर्म एक समान नहीं होते, क्योंकि मानव धर्म जिसे 'करनी' कहा जाता है और वह 'करनी' है, एक यूरोपीयन आपके प्रति मानव धर्म निभाए और आप उसके साथ मानव धर्म निभाएँ तो दोनों में बड़ा फर्क होगा। क्योंकि इसके पीछे उसकी भावना क्या है और आपकी भावना क्या है? क्योंकि आप डेवेलप्ड हैं, अध्यात्म जहाँ 'डेवेलप' हुआ है उस देश के हैं। इसलिए हमारे संस्कार बहुत उच्च प्रकार के हैं। यदि मानव धर्म में आया हो तो हमारे संस्कार तो इतने ऊँचे हैं कि उसकी सीमा नहीं है। किन्तु लोभ और लालच के कारण ये लोग मानव धर्म चूक गए हैं। हमारे यहाँ क्रोध-मान-माया-लोभ 'फुल्ली डेवेलप' (पूर्ण विकसित) होते हैं। इसलिए यहाँ के लोग यह मानव धर्म चूक गए हैं मगर मोक्ष के अधिकारी अवश्य हैं। क्योंकि यहाँ डेवेलप हुआ तब से ही वह मोक्ष का अधिकारी हो गया। वे लोग मोक्ष के अधिकारी नहीं कहलाते। वे धर्म के अधिकारी हैं लेकिन मोक्ष के अधिकारी नहीं हैं।

मानवता की विशेष समझ

प्रश्नकर्ता : भिन्न-भिन्न मानवता के लक्षण के बारे में ज़रा विस्तार से समझाइए।

दादाश्री : मानवता के ग्रेड (कक्षा) भिन्न-भिन्न होते हैं। प्रत्येक देश में जो मानवता है न, उसके डेवेलपमेन्ट के आधार पर सब ग्रेड होते हैं। मानवता यानी खुद का ग्रेड तय करना होता है कि यदि हमें मानवता लानी हो तो 'मुझे जो अनुकूल आता है वही मैं सामने वाले के लिए करूँ'। हमें जो अनुकूल आता हो वैसे ही अनुकूलता हम सामने वाले के लिए व्यवहार में लाएँ, वह मानवता कहलाती है। इसलिए सब की मानवता अलग-अलग होती है। मानवता सब की एक समान नहीं होती, उनके ग्रेडेशन के अनुसार होती है।

खुद को जो अनुकूल आए वैसा ही औरों के प्रति अनुकूल

रखना चाहिए कि यदि मुझे दु:ख होता है तो उसे दु:ख क्यों नहीं होगा? हमारा कोई कुछ चुरा ले तो हमें दु:ख होता है तो किसी का चुराते समय हमें विचार आना चाहिए या 'नहीं! किसी को दु:ख हो ऐसा कैसे करें?' यदि कोई हम से झूठ बोलता है तो हमें दु:ख होता है तो हमें भी किसी के साथ ऐसा करने से पहले सोचना चाहिए। हर एक देश के, प्रत्येक मनुष्य के मानवता के ग्रेडेशन भिन्न-भिन्न होते हैं।

मानवता अर्थात् 'खुद को जो पसंद है वैसा ही व्यवहार औरों के साथ करना'। यह छोटी व्याख्या अच्छी है लेकिन हर एक देश के लोगों को अलग-अलग तरह का चाहिए।

खुद को जो अनुकूल न आए, ऐसा प्रतिकूल व्यवहार औरों के साथ नहीं करना चाहिए। खुद को अनुकूल है वैसा ही वर्तन औरों के साथ करना चाहिए। यदि मैं आपके घर आया तब आप 'आइए, बैठिए' कहें और मुझे अच्छा लगता हो तो मेरे घर पर जब कोई आए तब मुझे भी उसे 'आइए, बैठिए' ऐसा कहना चाहिए, यह मानवता कहलाती है। फिर हमारे घर पर कोई आए, तब हम ऐसा नहीं बोलें और उनसे ऐसी उम्मीद करें, वह मानवता नहीं कहलाती। हम किसी के घर मेहमान होकर गए हों और वे अच्छा भोजन कराएँ ऐसी आशा करें तो हमें भी सोचना चाहिए कि जब हमारे घर कोई मेहमान आएँ तो उसे अच्छा भोजन करवाएँ। जैसा चाहिए वैसा करना वह मानवता है।

खुद को सामने वाले की जगह पर रखकर सारा व्यवहार करना, वह मानवता! मानवता हर एक की अलग-अलग होती है, हिंदुओं की अलग, मुसलमानों की अलग, क्रिश्चियनों की अलग, सभी की अलग-अलग होती हैं। जैनों की मानवता भी अलग होती है।

वैसे खुद को अपमान अच्छा नहीं लगता है और लोगों का अपमान करने में शूरवीर होता है, उसे मानवता कैसे कहे? अत: हर बात में विचारपूर्वक व्यवहार करें, वह मानवता कहलाती है।

संक्षेप में, मानवता की हर एक की अपनी-अपनी रीति होती है। 'मैं किसी को दुःख नहीं दूँ', यह मानवता की बाउन्ड्री (सीमा) है और वह बाउन्ड्री हर एक की अलग-अलग होती है। मानवता का कोई एक ही मापदंड नहीं है। 'जिससे मुझे दुःख होता है, वैसा दुःख मैं किसी और को नहीं दूँ। कोई मुझे ऐसा दुःख दे तो क्या हो? इसलिए वैसा दुःख मैं किसी को न दूँ।' वह खुद का जितना डेवेलपमेन्ट हो, उतना ही वह करता रहता है।

सुख मिलता है, सुख देकर

प्रश्नकर्ता : हम जानते हैं कि किसी का दिल नहीं दुःखे इस प्रकार से जीना है, वे सब मानवता के धर्म जानते हैं।

दादाश्री : वे तो सारे मानवता के धर्म हैं। मानव धर्म का अर्थ क्या है? हम सामने वाले को सुख दें तो हमें सुख मिलता रहें। यदि हम सुख देने का व्यवहार करें तो व्यवहार में हमें सुख प्राप्त होगा और दुःख देने का व्यवहार करें तो व्यवहार में दुःख प्राप्त होगा। इसलिए यदि हमें सुख चाहिए तो व्यवहार में सभी को सुख दो और दुःख चाहिए तो दुःख दो और यदि आत्मा का स्वाभाविक धर्म जान लें तो फिर कायमी सुख बरतेगा।

प्रश्नकर्ता : सभी को सुख पहुँचाने की शक्ति प्राप्त हो, ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए न?

दादाश्री : हाँ, ऐसी प्रार्थना कर सकते हैं!

जीवन व्यवहार में यथार्थ मानव धर्म

प्रश्नकर्ता : अब जिसे मनुष्य की मूल आवश्यकताएँ कहते हैं, उस भोजन, पानी, आराम आदि की व्यवस्था और प्रत्येक मनुष्य को आसरा मिले, इसके लिए प्रयत्न करना मानव धर्म कहलाता है?

दादाश्री : मानव धर्म तो वस्तु ही अलग है। मानव धर्म तो

यहाँ तक पहुँचता है कि इस दुनिया में लक्ष्मी का जो बँटवारा है, वह कुदरती बँटवारा है। उसमें मेरे हिस्से का जो है वह आपको देना पड़ेगा। इसलिए मुझे लोभ करने की ज़रूरत ही नहीं है। लोभ न रहे वह मानव धर्म कहलाता है। लेकिन इतना सब तो नहीं रह सकता, परंतु मनुष्य यदि कुछ हद तक का पालन करे तो भी बहुत हो गया।

प्रश्नकर्ता : तो उसका अर्थ यह हुआ कि जैसे-जैसे कषाय रहित होते जाएँ, वह मानव धर्म है?

दादाश्री : नहीं, ऐसा हो तब तो फिर वह वीतराग धर्म में आ गया। मानव धर्म यानी तो बस इतना ही कि पत्नी के साथ रहे, बच्चों के साथ रहे, फलाँ के साथ रहे, तन्मयाकार हो जाए, शादी रचाए इन सब में कषाय रहित होने का सवाल ही नहीं है, किन्तु आप ऐसा मानकर चलते हो कि आपको जो दुःख होता है वैसा ही दुःख दूसरों को भी होगा।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन उसमें यही हुआ न, कि मानो कि हमें भूख लगी है। भूख एक प्रकार का दुःख है। उसके लिए हमारे पास साधन है और, हम खाते हैं। किन्तु जिसके पास वह साधन नहीं है उसे वह देना। हमें जो दुःख होता है वह औरों को नहीं हो ऐसा करना वह भी एक तरह से मानवता ही हुई न?

दादाश्री : नहीं, यह आप जो मानते हैं न, वह मानवता नहीं है। कुदरत का नियम ऐसा है कि वह हर किसी को उसका भोजन पहुँचा देती है। एक भी गाँव हिन्दुस्तान में ऐसा नहीं है जहाँ पर किसी मनुष्य को कोई खाना पहुँचाने जाता हो, कपड़े पहुँचाने जाता हो। ऐसा कुछ नहीं है। ऐसा तो यहाँ शहरों में ही हैं, एक तरह का प्रतिपादन किया है, यह तो व्यापारी रीत आज़माई उन लोगों के लिए पैसा इकट्ठा करने के लिए। अड़चन तो कहाँ है? सामान्य जनता में, जो माँग नहीं सकते, बोल नहीं सकते, कुछ कह नहीं पाते वहाँ

अड़चनें हैं। बाकी सब जगह इसमें काहे की अड़चन है? यह तो बिना वजह ले बैठे हैं, बेकार ही!

प्रश्नकर्ता : ऐसे कौन हैं?

दादाश्री : हमारा सारा सामान्य वर्ग ऐसा ही है। वहाँ जाइए और उनसे पूछिए कि भाई, तुम्हें क्या अड़चन है? बाकी इन लोगों को, जिन्हें आप कहते हैं न कि इनके लिए दान करना चाहिए, वे लोग तो दारू पीकर मौज उड़ाते हैं।

प्रश्नकर्ता : वह ठीक है किन्तु आपने जो कहा कि सामान्य लोगों को ज़रूरत है, तो वहाँ देना वह धर्म हुआ न?

दादाश्री : हाँ, मगर उसमें मानव धर्म को क्या लेना-देना? मानव धर्म का अर्थ क्या है, जैसे मुझे दुःख होता है वैसे दूसरों को भी होता होगा इसलिए ऐसा दुःख न हो इस प्रकार व्यवहार करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसा ही हुआ न? किसी को कपड़े नहीं हों...

दादाश्री : नहीं, वे तो दयालु के लक्षण हुए। सभी लोग दया कैसे दिखा सकते हैं? वह तो जो पैसेवाला हो वही कर सकता है।

प्रश्नकर्ता : सामान्य मनुष्य को ज़रूरत की चीज़ें प्राप्त हो, उनकी आवश्यकताएँ पूर्ण हों, इसलिए क्या सामाजिक स्तर से दिलवाने का प्रयत्न करना योग्य है? सामाजिक स्तर पर अर्थात् हम सरकार पर दबाव डालें कि आप ऐसा करें, इन लोगों को दें। ऐसा करना मानव धर्म में आता है?

दादाश्री : नहीं। वह सारा गलत इगोइज़म (अहंकार) है इन लोगों का।

समाज सेवा करते हैं, वह तो लोगों की सेवा करता है, ऐसा

कहते हैं। या तो दया करता है, संवेदना दिखाता है, ऐसा कहते हैं। किन्तु मानव धर्म तो सभी को स्पर्श करता है। मेरी घड़ी खो जाए तो मैं समझूँ कि कोई मानव धर्म वाला होगा तो घड़ी वापस आएगी। जबकि उस प्रकार की जो भी सभी सेवा करते हैं, वे कुसेवा कर रहे हैं। एक आदमी को मैंने कहा, 'यह क्या कर रहे हो? किसलिए उन लोगों को ये दे रहे हो? ऐसे देते होंगे? आए बड़े सेवा करने वाले! सेवक आए! क्या देखकर सेवा करने निकले हो?' लोगों के पैसे गलत रास्ते पर जाते हैं और लोग दे भी देते हैं!

प्रश्नकर्ता : किन्तु आज उसे ही मानव धर्म कहा जाता है।

दादाश्री : मनुष्यों को खत्म कर डालते हो, आप उन्हें जीने भी नहीं देते। उस आदमी को मैंने बहुत डाँटा। कैसे व्यक्ति हो? किसने आपको ऐसा सिखाया? लोगों से पैसे लाना और अपनी दृष्टि में गरीब लगे उसे बुलाकर देना। अरे, उसका थर्मामीटर (मापदंड) क्या है? यह गरीब लगा इसलिए उसे देना है और यह नहीं लगा इसलिए क्या उसे नहीं देना? जिसे मुसीबत का अच्छी तरह वर्णन करना नहीं आया, बोलना नहीं आया, उसे नहीं दिए और दूसरे को अच्छा बोलना आ गया तो उसे दे दिए। बड़ा आया थर्मामीटर वाला! फिर उसने मुझसे कहा, आप मुझे दूसरा रास्ता दिखाइए। मैंने कहा, यह आदमी शरीर से तगड़ा है तो उसे अपने पैसे से हज़ार-डेढ़ हज़ार का एक ठेला दिलवा देना, और दो सौ रुपये नकद देकर कहना कि सब्ज़ी-भाजी ले आ और बेचना शुरू कर दे और उसे कहना कि इस ठेले का भाड़ा हर दो-चार दिन में पचास रुपये भर जाना।

प्रश्नकर्ता : मुफ्त में नहीं देना, उसे ऐसे उत्पादन के साधन देना।

दादाश्री : हाँ, वर्ना ऐसे तो आप उसे बेकार बनाते हैं। सारे संसार में कहीं भी बेकारी नहीं है, ऐसी बेकारी आपने फैलाई है। यह हमारी सरकार ने फैलाई है, ये सब करके। ये सारा नाटक वोट लेने के लिए ही है।

मानव धर्म तो सेफसाइड (सलामती) ही दिखाता है।

प्रश्नकर्ता : यह बात सच है कि हम दया दिखाएँ तो उसमें एक तरह की ऐसी भावना होती है कि वह दूसरों पर जी रहा है।

दादाश्री : उसे खाने-पीने का मिला, इसलिए फिर उनमें से कोई दारू रखता हो, वहाँ जाकर बैठता है और खा-पीकर मौज उड़ाता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ दादा, पीते हैं। उसका उपयोग उस तरह से होता है।

दादाश्री : यदि ऐसा ही है तो हमें उन्हें नहीं बिगाड़ना चाहिए। यदि हम किसी को सुधार नहीं सकते तो उसे बिगाड़ना भी नहीं चाहिए। वह कैसे? वे औरों से कपड़े लेकर ऐसे लोगों को देते हैं, किन्तु ऐसे लेने वाले लोग कपड़े बेचकर बरतन लेते हैं। इसके बजाय उन लोगों को किसी काम पर लगा दें। इस प्रकार कपड़े और खाना देना, मानव धर्म नहीं है। अरे भाई! ऐसे नहीं देते। बल्कि उन्हें किसी काम काज में लगा दो।

प्रश्नकर्ता : आप जो कह रहे हैं वह बात सभी को स्वीकार है जबकि उसमें तो सिर्फ दान देकर उन्हें पंगु बनाते हैं।

दादाश्री : उसी का यह पंगुपन है। इतने अधिक दयालु लोग, किन्तु ऐसी दया करने की ज़रूरत नहीं है। उसे एक ठेला दिलाओ और साग़-सब्ज़ी दिलाओ, एक दिन बेच आए, दूसरे दिन बेच आए। उसका रोज़गार शुरू हो गया। ऐसे बहुत सारे रास्ते हैं।

मानव धर्म की निशानी

प्रश्नकर्ता : हम अपने मित्रों के बीच दादा जी की बात करते हैं, तो वे कहते हैं, 'हम मानव धर्म का पालन करते हैं और इतना काफी है', ऐसा कहकर बात को टाल देते हैं।

दादाश्री : हाँ, मानव धर्म का पालन करें तो हम उसे 'भगवान' कहेंगे। मानव धर्म यानी खाना खाया, नहाया, चाय पी, वह मानव धर्म नहीं कहलाता।

प्रश्नकर्ता : नहीं। मानव धर्म में लोग क्या कहते हैं कि एक-दूसरे की मदद करना, किसी का भला करना, लोगों को हैल्पफुल होना। लोग इसे मानव धर्म समझते हैं।

दादाश्री : मानव धर्म वह नहीं है। जानवर भी अपने परिवार को मदद करने की समझ रखते हैं बेचारे!

मानव धर्म अर्थात् प्रत्येक बात में उसे विचार आए कि मुझे ऐसा हो तो क्या हो? यह विचार पहले न आए तो वह मानव धर्म में नहीं है। किसी ने मुझे गाली दी तो बदले में मैं उसे गाली दूँ उससे पहले मेरे मन में ऐसा हो कि, 'यदि मुझे इतना दुःख होता है तो फिर मैं गाली दूँगा तो उसे कितना दुःख होगा!' ऐसा समझकर वह गाली न देकर निपटारा करता है।

यह मानव धर्म की प्रथम निशानी है। यहाँ से मानव धर्म शुरू होता है। मानव धर्म की बिगिनिंग यहाँ से ही होनी चाहिए! बिगिनिंग ही न हो तो वह मानव धर्म समझा ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : 'मुझे दुःख होता है वैसे ही औरों को भी दुःख होता है' यह जो भाव है, वह भाव जैसे-जैसे डेवेलप होता है, तब फिर मानव की मानव के प्रति अधिक से अधिक एकता डेवेलप होती जाती है न?

दादाश्री : वह तो होती जाती है। सारे मानव धर्म का उत्कर्ष होता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह सहजरूप से उत्कर्ष होता रहता है।

दादाश्री : सहजरूप से होता है।

पाप घटाना, वह सच्चा मानव धर्म

मानव धर्म से तो कई प्रश्न हल हो जाते हैं और मानव धर्म लेवल में (संतुलन में) होना चाहिए। जिसकी लोग आलोचना करें, वह मानव धर्म है ही नहीं। कितने ही लोगों को मोक्ष की आवश्यकता नहीं है, किन्तु मानव धर्म की तो सभी को ज़रूरत है न! मानव धर्म में आए तो बहुत से पाप कम हो जाएँ।

वह समझदारीपूर्वक होना चाहिए

प्रश्नकर्ता : मानव धर्म में, औरों के प्रति हमारी अपेक्षा हो कि उसे भी ऐसे ही व्यवहार करना चाहिए तो वह कई बार अत्याचार बन जाता है।

दादाश्री : नहीं! हर एक को मानव धर्म में रहना चाहिए। उसे ऐसे बरतना चाहिए, ऐसा कोई नियम नहीं होता। मानव धर्म अर्थात् खुद समझकर मानव धर्म का पालन करना सीखे।

प्रश्नकर्ता : हाँ खुद समझकर! किन्तु यह तो औरों को कहे कि आपको ऐसे बरतना चाहिए, ऐसा करना, वैसा करना है।

दादाश्री : ऐसा कहने का अधिकार किसे है? आप क्या गवर्नर है? आप ऐसा नहीं कह सकते।

प्रश्नकर्ता : हाँ, इसलिए वह अत्याचार बन जाता है।

दादाश्री : अत्याचार ही कहा जाएगा! खुला अत्याचार! आप किसी को बाध्य नहीं कर सकते। आप उसे समझा सकते हैं कि भाई, ऐसा करेंगे तो आपको लाभदायक होगा, आप सुखी होंगे। बाध्य तो कर ही नहीं सकते किसी को।

ऐसे रौशन करें मनुष्य जीवन...

यह मनुष्यपन कैसे कहलाएगा? सारा दिन खा-पीकर घूमते

रहे और दो एक को डाँटकर आए, और फिर रात को सो गए। इसे मनुष्यपन कैसे कह सकते हैं? इस प्रकार मनुष्य जीवन को लज्जित करते हैं। मनुष्यपन तो वह है कि शाम को पाँच-पच्चीस लोगों को ठंडक पहुँचाकर घर आए! जबकि यह तो, मनुष्य जीवन को लज्जित किया!

पुस्तकें पहुँचाओ स्कूल-कॉलेज में

यह तो अपने आपको क्या समझ बैठे हैं? कहते हैं, 'हम मानव हैं। हमें मानव धर्म का पालन करना है'। मैंने कहा, 'हाँ, ज़रूर पालन करना। बिना समझे बहुत दिनों किया, किन्तु अब सही समझकर मानव धर्म का पालन करना है'। मानव धर्म तो अति श्रेष्ठ वस्तु है।

प्रश्नकर्ता : किन्तु दादा जी, लोग तो मानव धर्म की परिभाषा ही अलग तरह की देते हैं। मानव धर्म को बिल्कुल अलग ही तरह से समझते हैं।

दादाश्री : हाँ, उसकी कोई अच्छी सी पुस्तक ही नहीं है। कुछ संत लिखते हैं लेकिन वह पूर्ण रूप से लोगों की समझ में नही आता। इसलिए ऐसा होना चाहिए कि पूरी बात पुस्तक के रूप में पढ़ें, समझें तब उसके मन में ऐसा लगना चाहिए कि हम जो कुछ मानते हैं वह सारी भूल है। ऐसी मानव धर्म की पुस्तक तैयार करके स्कूल के एक खास आयु वर्ग के बच्चों को सिखाना चाहिए। जागृति की ज़रूरत अलग चीज़ है और यह साइकोलॉजिकल इफेक्ट (मानसिक असर) अलग चीज़ है। यदि स्कूल में ऐसा सीखेंगे तो उन्हें याद आएगा ही। किसी का कुछ गिरा हुआ मिलते ही उन्हें तुरंत याद आएगा, 'अरे, यदि मेरा गिर गया होता तो मुझे कैसा होता? इससे औरों को कितना दु:ख होता होगा?' बस, यही साइकोलॉजिकल इफेक्ट। इसमें जागृति की ज़रूरत नहीं है। इसलिए ऐसी पुस्तक छपवाकर वह पुस्तक ही सभी स्कूल-कॉलेजों में एक उम्र तक के विद्यार्थियों के लिए उपलब्ध करवानी चाहिए।

मानव धर्म का पालन करें तो पुण्य करने की ज़रूरत ही नहीं है। वह पुण्य ही है। मानव धर्म की तो पुस्तकें लिखी जानी चाहिए कि मानव धर्म अर्थात् क्या? ऐसी पुस्तकें लिखी जाएँ, जो पुस्तकें भविष्य में भी लोगों के पढ़ने में आएँ!

प्रश्नकर्ता : वह तो यह भाई अखबार में लेख लिखेंगे न?

दादाश्री : नहीं, वह नहीं चलेगा। लिखे हुए लेख तो रद्दी में चले जाते हैं। इसलिए पुस्तकें छपवानी चाहिए। फिर वह पुस्तक यदि किसी के यहाँ पड़ी हो तो फिर से छपवाने वाला कोई निकल आएगा। इसलिए हम कहते हैं कि ये सभी हज़ारों पुस्तकें और सभी आप्तवाणियाँ बाँटते रहिए। एकाध पुस्तक रह गई होगी तो भविष्य में भी लोगों का काम होगा, वर्ना बाकी का यह सब तो रद्दी में चला जाएगा। जो लेख लिखा जाता है, वह सोने जैसा हो तो भी दूसरे दिन रद्दी में बेच देंगे हमारे हिन्दुस्तान के लोग! अंदर अच्छा पन्ना होगा उसे फाड़ेंगे नहीं, क्योंकि उतना रद्दी में वज़न कम हो जाएगा न! इसलिए यह मानव धर्म पर यदि पुस्तक लिखी जाए...

प्रश्नकर्ता : दादा जी की वाणी मानव धर्म पर बहुत सी होगी!

दादाश्री : बहुत, बहुत, काफी निकली है। हम नीरू बहन से प्रकाशित करने को कहेंगे। नीरू बहन से कहो न! वाणी निकालकर, पुस्तक तैयार करें।

मानवता मोक्ष नहीं है। मानवता में आने के पश्चात् मोक्ष प्राप्ति की तैयारियाँ होती हैं, वर्ना मोक्ष प्राप्त करना कोई आसान बात नहीं है।

जय सच्चिदानंद

नौ कलमें

1. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा का किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे (ठेस न पहुँचे), न दुभाया जाए या दुभाने के प्रति अनुमोदना न की जाए, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

   मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा का किंचित्मात्र भी अहम् न दुभे, ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दीजिए।

2. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभे, न दुभाया जाए या दुभाने के प्रति अनुमोदना न की जाए, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

   मुझे, किसी भी धर्म का किंचित्मात्र भी प्रमाण न दुभाया जाए ऐसी स्याद्वाद वाणी, स्याद्वाद वर्तन और स्याद्वाद मनन करने की परम शक्ति दीजिए।

3. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी उपदेशक साधु, साध्वी या आचार्य का अवर्णवाद, अपराध, अविनय न करने की परम शक्ति दीजिए।

4. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति किंचित्मात्र भी अभाव, तिरस्कार कभी भी न किया जाएँ, न करवाया जाएँ या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जाए, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

5. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा के साथ कभी भी कठोर भाषा, तंतीली भाषा न बोली जाएँ, न बुलवाई जाएँ या बोलने के प्रति अनुमोदना न की जाएँ, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

कोई कठोर भाषा, तंतीली भाषा बोले तो मुझे, मृदु-ऋजु भाषा बोलने की परम शक्ति दीजिए।

6. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा के प्रति स्त्री, पुरुष या नपुंसक, कोई भी लिंगधारी हो, तो उसके संबंध में किंचित्मात्र भी विषय-विकार संबंधी दोष, इच्छाएँ, चेष्टाएँ या विचार संबंधी दोष न किए जाएँ, न करवाए जाएँ या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जाए, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

   मुझे, निरंतर निर्विकार रहने की परम शक्ति दीजिए।

7. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी रस में लुब्धता न हो ऐसी शक्ति दीजिए।

   समरसी आहार लेने की परम शक्ति दीजिए।

8. हे दादा भगवान! मुझे, किसी भी देहधारी जीवात्मा का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष, जीवित अथवा मृत, किसी का किंचित्मात्र भी अवर्णवाद, अपराध, अविनय न किया जाए, न करवाया जाए या कर्ता के प्रति अनुमोदना न की जाए, ऐसी परम शक्ति दीजिए।

9. हे दादा भगवान! मुझे, जगत् कल्याण करने का निमित्त बनने की परम शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए।

शुद्धात्मा के प्रति प्रार्थना

(प्रतिदिन एक बार करें)

हे अंतर्यामी परमात्मा! आप प्रत्येक जीवमात्र में विराजमान हैं, वैसे ही मुझ में भी विराजमान हैं। आपका स्वरूप ही मेरा स्वरूप है। मेरा स्वरूप शुद्धात्मा है।

हे शुद्धात्मा भगवान! मैं आपको अभेद भाव से अत्यंत भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

अज्ञानतावश मैंने जो जो ★★ दोष किए हैं, उन सभी दोषों को आपके समक्ष ज़ाहिर करता हूँ। उनका हृदयपूर्वक बहुत पश्चाताप करता हूँ और आपसे क्षमा-याचना करता हूँ। हे प्रभु! मुझे क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए, क्षमा कीजिए और फिर से ऐसे दोष नहीं करूँ, ऐसी आप मुझे शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए, शक्ति दीजिए।

हे शुद्धात्मा भगवान! आप ऐसी कृपा करें कि हमारे भेदभाव छूट जाएँ और अभेद स्वरूप प्राप्त हो। मैं आप में अभेद स्वरूप से तन्मयाकार रहूँ।

★★ जो जो दोष हुए हों, वे मन में ज़ाहिर करें।

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दुःखों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण (सं, ग्रं)
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार (सं, ग्रं)
19. अंतःकरण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (सं, पू, उ)
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार (सं)
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार(सं)
40. वाणी, व्यवहार में... (सं)
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 12 (पू)
53. आप्तवाणी - 13 (पू, उ)
55. आप्तवाणी - 14 (भाग-1 से 3)
58. ज्ञानी पुरुष (भाग-1)

(सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध)

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

संपर्क सूत्र

दादा भगवान परिवार

अडालज (मुख्य केन्द्र) : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : +91 79 3500 2100, +91 9328661166/77
E-mail : info@dadabhagwan.org

मुंबई : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

दिल्ली	9810098564	**बेंगलूर**	9590979099
कोलकता	9830093230	**हैदराबाद**	9885058771
चेन्नई	7200740000	**पूणे**	7218473468
जयपुर	8890357990	**जलंधर**	9814063043
भोपाल	6354602399	**चंडीगढ़**	9780732237
इन्दौर	6354602400	**कानपुर**	9452525981
रायपुर	9329644433	**सांगली**	9423870798
पटना	7352723132	**भुवनेश्वर**	8763073111
अमरावती	9422915064	**वाराणसी**	9795228541

U.S.A. : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
Email : info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 330-111-DADA (3232)

Kenya : +254 795-92-DADA (3232)

UAE : +971 557316937

Dubai : +971 501364530

Australia : +61 402179706

New Zealand : +64 21 0376434

Singapore : +65 91457800

www.dadabhagwan.org

मानव धर्म अपनाइए जीवन में !

मानव धर्म अर्थात् हर एक बात में उसे विचार आए कि मुझे ऐसा हो तो क्या हो? किसी ने मुझे गाली दी उस समय मैं भी उसे गाली दूँ, उससे पहले मेरे मन में ऐसा होना चाहिए कि 'यदि मुझे ही इतना दु:ख होता है तो फिर मेरे गाली देने से उसे कितना दु:ख होगा!' ऐसा सोचकर वह समझौता करे तो निबटारा हो। यह मानव धर्म की पहली निशानी है। वहाँ से मानव धर्म शुरू होता है।

इसलिए यह पुस्तक छपवाकर, सभी स्कूलों-कॉलिजों में शुरू हो जानी चाहिए। सारी बातें पुस्तक के रूप में पढ़ें, समझें तब उनके मन में ऐसा हो कि यह सब हम जो मानते हैं, वह भूल है। अब सच समझकर मानव धर्म का पालन करना है। मानव धर्म तो बहुत श्रेष्ठ वस्तु है।

\- दादाश्री

dadabhagwan.org

ISBN 978-93-86289-59-9

Printed in India

Price ₹20